Impact Factor (QJIF): 8.47 E-ISSN: 2583-1615, P-ISSN: 3049-3498

International Journal of Research in Academic World

Received: 25/July/2026 **IJRAW:** 2026; 5(10):44-48 **Accepted:** 29/August/2026

प्राचीन भारतीय कला में संयुक्त देव प्रतिमाओं की परंपरा: संघात मूर्तियों के विशेष संदर्भ में

***[1]डॉ. ओम प्रकाश यादव**

*[1]असिस्टेंट प्रोफेसर, प्राचीन इतिहास विभाग, मथुरा प्रसाद महाविद्यालय कोच, जालौन, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी, उत्तरप्रदेश), भारत।

सारांश

प्राचीन भारतीय कला के विविध रूपों में मूर्ति कला मानव के सौन्दर्यबोध के अभिव्यक्तिकरण का एक सशक्त माध्यम होने के साथ ही उसके सांस्कृतिक विचारों एवं भावनाओं के अर्थ को समझने में सहायक रही है। भारतीय मूर्तिकला में न केवल धार्मिक अपितु धर्मेत्तर मूर्तियां भी निर्मित हुई, इन मूर्तियों का निर्माण पूर्णता स्वतंत्र होकर शिल्पियों ने किया है जो अनुकृति मात्र न होकर वास्तव में सामूहिक चिंतन का परिणाम रही है। धार्मिक समन्वयवादिता की अभिव्यक्ति के लिए भारतीय शिल्प एवं उपासना विधान में कतिपय ऐसे प्रतिमा स्वरूपों की भी कल्पना की गई जिनमें दो या दो से अधिक देवताओं के लक्षणों एवं आयुधों को संयुक्त रूप में प्रदर्शित किया गया, ऐसी समन्वय प्रतिमाओं को प्रतिमाशास्त्रों में संघात, संयुक्त, युग्म, युगल, यामल, मिश्रमूर्त्तय:, एकीभूतशरीर, देहाधिकारिन एवं सम्पृक्त आदि नामों से विवेचित किया गया है। वैदिक काल में बहुदेववाद की कल्पना की गई, परंतु साथ ही यह धारणा भी बनी रही कि देवताओं में केवल वाह्य एवं स्वरूपगत अंतर होता है, जबकि वास्तव में सभी देवता एक हैं। संघात मूर्तियां वस्तुतः इसी भाव को व्यक्त करती दृष्टिगत होती है।

मुख्य शब्द: संघात, समन्वयवादिता, बहुदेववाद, अर्द्धनारीश्वर, हरिहर, हरिहरपितामह, सूर्यनारायण, चंद्रार्क -पितामह, सूर्यब्रह्मा, सप्ताश्वरथ, पंचदेवपट्ट, शिवलोकेश्वर।

प्रस्तावना

संघात मूर्तियों को प्राय: तीन वर्गों में विभाजित किया जाता है। प्रथम वर्ग में उन मूर्तियों को रखा जाता है जिनमें एक ही आकृति में शरीर के दो भागों में दो भिन्न-भिन्न देवताओं के आयुध और लक्षण प्रदर्शित होते हैं। इस कोटि में अर्द्धनारीश्वर और हरिहर प्रतिमाएं आती हैं। द्वितीय वर्ग की संघात स्वरूप में दो या दो से अधिक देवताओं को प्रदर्शित किया गया जिनमें कभी-कभी मुखों की संख्या देवताओं की संख्या के आधार पर प्रदर्शित की गई है। इस कोटि की मूर्तियों में मुख्य हैं-हरिहर-पितामह, हरिहर-हिरण्यगर्भ, हरिहर-पितामह-हिरण्यगर्भ, सूर्यनारायण, सूर्यब्रह्मा, चन्द्रार्क-पितामह, सूर्य-नारायण-ब्रह्मा, हरिहरार्क, रुद्रभास्कर या मार्तण्डभैरव, शिवलोकेश्वर स्वरूपों की मूर्तियां मुख्य हैं। तृतीय वर्ग के अंतर्गत एक ही फलक पर स्वतंत्र आकृतियों के माध्यम से कई देवी-देवताओं को साथ-साथ निरूपित किया गया जिनमें हरिहर पितामह स्वरूप मुख्य है। पंचदेवपट्ट (ब्रह्मा, विष्णु, शिव, शक्ति, सूर्य) एवं हरिहर-सूर्य-बुध्द मूर्तियां भी इसी वर्ग के उदाहरण है। [1] इन मूर्तियों के अतिरिक्त सप्तमातृका मूर्तियों में विष्णु, शिव, ब्रह्मा, इंद्र, कार्तिकेय, गणेश आदि की शक्तियों का एक साथ निरूपण धर्मसमन्वयवादिता का प्रतिबिंब है। संघात प्रतिमाओं का एक अन्य स्वरूप पंचायतन लिंग प्रकार था, जिसमें सूर्य, विष्णु, शिव, शक्ति एवं गणेश (कभी-कभी शक्ति और गणेश के स्थान पर ब्रह्मा का मूर्तन प्राप्त होता है) इन पंचदेवों को एक ही पंचमुखी लिंग पर पृथक मुखो में अलग-अलग प्रदर्शित किए जाते थे। यह संघात शिल्पांकन पांच प्रमुख धार्मिक संप्रदायों (शैव, शाक्त, वैष्णो, सौर्य एवं गाणपत्य संप्रदायों) के पारस्परिक सद्भाव एवं धर्म-सामंजस्य और पंचायतन पूजा की परंपरा को प्रदर्शित करते हैं।

विष्णुधर्मोत्तरपुराण, अपराजितपृच्छा रूपमण्डन, बृहत्संहिता, शिल्पसार, शिल्परत्न देवतामूर्तिप्रकरण, शारदातिलकतंत्र, अंशुमदभेदागम, उत्तरकामिकागम, सुप्रभेदागम, पूर्वकारणागम आदि अनेक प्रतिमाशास्त्रीय ग्रन्थों में संघात मूर्तियों के स्वरूप का विस्तृत उल्लेख किया गया है यद्यपि की शिल्पियों ने संघात प्रतिमाओं का निर्माण कुषाण काल से प्रारम्भ किया जो गुप्त काल एवं पूर्व मध्यकाल में अधिक लोकप्रिय हो गया।

प्राचीन भारतीय कला की संघात मूर्तियों में अर्द्धनारीश्वर मूर्ति प्रमुख है। यह शिव का वह स्वरूप है जिसमें शिव को उनकी शक्ति के साथ संयुक्त प्रदर्शित किया जाता था। इस कोटि की प्रतिमा को अर्द्धनारीश्वर कहा गया इसका एक अन्य नाम गौरीश्वर है। विष्णुधर्मोत्तरपुराण में वर्णित है कि गौरीश्वर रूप ही शिव का अर्द्धनारीश्वर रूप है। इसके अनुसार यह मूर्ति शिव एवं शक्ति, नर एवं नारी तथा ब्रह्मा एवं माया आदि सृष्टि के द्वंदात्मक मूल कारणों के संयोग का प्रतिनिधित्व करती है। [2] विष्णुधर्मोत्तर पुराण के अनुसार

***Corresponding Author:** डॉ. ओम प्रकाश यादव

अर्द्धनारीश्वर स्वरूप में शिव को चतुर्भुज एवं उनके आधे बायें शरीर में सर्वभूषण युक्त पार्वती का अंकन किया जाना चाहिए जबकि दायीं ओर आयुध एवं आभूषणों से युक्त शिव का अंकन किया जाना चाहिए। [3] चतुर्भुज अर्द्धनारीश्वर के दाहिने हाथों में अक्षमाला और त्रिशूल तथा पार्वती के हाथों में पद्म और दर्पण प्रदर्शित किए जाने का विधान है। अपराजितापृच्छा मैं चतुर्भुज अर्द्धनारीश्वर मूर्ति में शिव भाग कपाल मेखला से अलंकृत बताया गया है। शिव के हाथों में त्रिशूल और अक्षमाला तथा पार्वती के हाथों में दर्पण और कमंडलु होगा। पार्वती के समीप ही गणेश भी निरूपित होगें। [4] दक्षिण भारतीय ग्रन्थों (मानसार, मानसोल्लास, मयमत) के अनुसार अर्द्धनारीश्वर मूर्ति द्विभुजी, त्रिभुजी या चतुर्भुजी होगी। त्रिभुजी मूर्ति में शिव भाग में दो और पार्वती भाग में एक हाथ प्रदर्शित करने का विधान किया गया है। शिव के हाथों में अभय- मुद्रा और अक्षमाला प्रदर्शित होगा जबकि पार्वती के हाथ में उत्पल होगा। चतुर्भुज मूर्ति में पार्वती भाग का एक बायां हाथ या तो नीचे लटकता हुआ होगा या वृषभ वाहन के मस्तक पर स्थित होगा या उसमें दर्पण या पुष्प होगा जबकि दूसरा हाथ कटि पर स्थित होगा या उसमें नीलोत्पल होगा। [5] मूर्ति शिल्प में अर्द्धनारीश्वर स्वरूप की व्यापक लोकप्रियता के फलस्वरुप गुर्जर- प्रतिहार, कलचुरि, सेन आदि शासको के दानपत्रों एवं अभिलेखों में अर्द्धनारीश्वर स्वरूप का अंकन मिलता है।

अर्द्धनारीश्वर मूर्तियों का निर्माण कुषाण काल में प्रारंभ हुआ इस काल की अर्द्धनारीश्वर मूर्तियां मथुरा से प्राप्त हुई है जो पुरातत्व संग्रहालय मथुरा में सुरक्षित शिलापट्ट पर एक ही पंक्ति में अर्द्धनारीश्वर, विष्णु, गजलक्ष्मी तथा कार्तिकेय अंकित हैं। अर्द्धनारीश्वर द्विभुज है तथा हाथों में कोई आयुध नहीं है। [6] तत्पश्चात गुप्त काल में अर्द्धनारीश्वर मूर्तियों का निर्माण अधिक व्यापक हुआ, पूर्व मध्यकाल में इन मूर्तियों का और अधिक लाक्षणिक विकास हुआ। भुवनेश्वर, खजुराहो, ओसिया, बादामी, महाबलीपुरम, एलिफेंटा, एलोरा, तंजौर, कांचीपुरम, दारासुरम, कुम्भकोणम, गंगैकोण्डचोलपुरम, मोढेरा, चंद्रभागा, कन्नौज आदि अनेक स्थलों से अर्द्धनारीश्वर की सुंदर एवं कलात्मक मूर्तियां उपलब्ध हैं जो अत्यधिक मनोरम है।

भुवनेश्वर की अर्द्धनारीश्वर मूर्तियों में प्रतिमा लक्षण की दृष्टि से कई विशेषताएं दृष्टिगत होती हैं। इनमें द्विभुज, चतुर्भुज, षड्भुज और अष्टभुजी शिव और पार्वती मूर्तियों के साथ उनके वाहन क्रमशः वृषभ और सिंह का अंकन विशेष रूप से उल्लेखनीय है। भुवनेश्वर और मोढेरा (सूर्य मंदिर) से अर्द्धनारीश्वर की नृत्यरत मूर्तियां प्राप्त हुई है। लगभग आठवीं शदी ईसवी की अर्द्धनारीश्वर स्वरूप की तीन मूर्तियां ओसिया के सूर्य मंदिर, सत्यनारायण मंदिर तथा हरिहर मंदिर से प्राप्त हुई है। यहां से प्राप्त मूर्ति में शिव का एक हाथ अभय- मुद्रा में और दूसरे में त्रिशूल का अंकन प्राप्त होता है। सत्यनारायण मंदिर से प्राप्त मूर्ति में शिव के हाथों में पद्म और पार्वती के हाथों में दर्पण और कमंडलु प्रदर्शित किया गया है। खजुराहो की लक्ष्मण, विश्वनाथ, चित्रगुप्त, कंदरिया महादेव एवं चतुर्भुज मंदिरों से अर्द्धनारीश्वर की प्रतिमाएं प्राप्त हुई है। इनमें एक अष्टभुजी मूर्ति के अतिरिक्त सभी चतुर्भुज स्वरूप में प्रदर्शित की गई हैं। चतुर्भुज अर्द्धनारीश्वर मूर्तियों के दाहिने हाथों में वरद- मुद्रा और त्रिशूल तथा बायें हाथों में दर्पण एवं कमंडलु है। इन मूर्तियों में शिव- पार्वती के वाहन (वृषभ और सिंह) तथा परिकर में गणेश, कार्तिकेय, ब्रह्मा, विष्णु और सरस्वती की भी मूर्तियां उकेरी गई है। कुम्भकोणम् के चोल कालीन नागेश्वरस्वामी मंदिर में एक त्रिभुजी अर्द्धनारीश्वर मूर्ति प्राप्त हुई है जिसमें शिव के दो हाथों में से एक नंदी पर विश्राम अवस्था में और दूसरे में परशु है जबकि पार्वती भाग में मात्र एक ही हाथ है जिसमें दर्पण प्रदर्शित किया गया है। त्रिभुज मूर्तियां शास्त्रीय परंपरा से निर्दिष्ट हैं और मुख्यतः चोल मंदिरों पर उकेरी गई है। चोल काल में निर्मित नागेश्वरस्वामी मंदिर तथा तंजौर एवं गंगैकोण्डचोलपुरम के बृहदेश्वर एवं चिदंबरम के नटराज मंदिर में द्रष्टव्य है। अर्द्धनारीश्वर की कुछ भव्य प्रतिमाएं बंग भूमि से प्रकाश में आई हैं। बल्लाल सेन के नौहाटी ताम्र-फलक पर नृत्य करते अर्द्धनारीश्वर का चित्रण प्राप्त होता है। [7]

हरिहर मूर्तियां वैष्णो और शैव संप्रदायों की एकात्मकता की प्रतीक हैं। हरिहर स्वरूप में एक ही मूर्ति में शिव (दक्षिणार्ध) और विष्णु (वामार्ध) दोनों के लक्षण प्रदर्शित किए जाते हैं। विष्णु पुराण में शिव स्वयं अपने श्रीमुख से कहते हैं कि वह हरि का ही अर्धभाग हैं एवं विष्णु से इत्तर उनका कोई व्यक्तित्व नहीं है। विष्णुधर्मोत्तरपुराण में विवेचित है कि हरिहर की प्रतिमा के दाहिने आधे भाग में सदाशिव तथा वामार्ध भाग में ह्रषिकेश को निर्मित किया जाना चाहिए। श्वेत वर्ण शिव के हाथों में वरद-मुद्रा एवं त्रिशूल तथा नीले वर्ण विष्णु के हाथों में पद्म और चक्र के उल्लेख मिलते हैं। [8] रूपमण्डन में भी इन्हीं आयुधों का उल्लेख मिलता है। अपराजितपृच्छा में जटामुकुट से शोभित शिव को अक्षमाला एवं त्रिशूल तथा विष्णु को शंख और चक्र से युक्त बताया गया है। इस प्रकार शिल्पशास्त्रों में मुख्यतः हरिहर का चतुर्भुज स्वरूप जबकि हरिवंश पुराण में षडभुज और वामन पुराण में द्वादशभुजी हरिहर मूर्तियों का निरूपण हुआ है। [9]

मूर्ति कला में हरिहर मूर्ति का उद्गम कुषाण काल के पूर्व दृष्टिगत नहीं होता है। हरिहर के प्रतिमा लक्षण का एक उदाहरण कुषाण शासक हुविष्क की एक स्वर्ण मुद्रा के पृष्ठ भाग पर अंकित मिलता है, जिसमें विष्णु एवं शिव के आयुध चक्र एवं त्रिशूल के लक्षण द्रष्टव्य है। वस्तुतः हरिहर स्वरूप की प्रतिमा निर्माण परंपरा गुप्त काल से अधिक लोकप्रिय हुई जिसके कुछ प्रारंभिक साक्ष्य मथुरा, विदिशा, नालंदा, बादामी और एहोल आदि अन्य स्थलों से प्राप्त होते हैं। पूर्व मध्यकाल में चतुर्भुज हरिहर स्वरूप की मूर्तियां प्रभूत संख्या में उकेरी गयी। भुवनेश्वर के मंदिरों पर दोभुजी और अष्टभुजी मूर्तियां द्रष्टव्य हैं। यह स्वरूप इतना लोकप्रिय हुआ कि ओसिया में तीन हरिहर मंदिर तथा मथुरा, विदिशा, नालंदा, बादामी, एहोल, कर्नाटक, होयसल, खजुराहो, भुवनेश्वर, पट्टडकल, ऐलोरा, चांदपुर में अनेक हरिहर मंदिरों का निर्माण हुआ। लगभग चौथी शताब्दी ईस्वी की एक विशाल हरिहर प्रतिमा विदिशा से प्राप्त हुई है जो स्पष्टतया ऊर्ध्वलिंगावस्था में है और वर्तमान में दिल्ली राष्ट्रीय संग्रहालय में सुरक्षित है। गुप्त काल की हरिहर मूर्ति का एक सुंदर नमूना प्रयाग के संग्रहालय में चतुर्मुख प्रतिमा के रूप में विद्यमान है। प्रतिमा में आयुध के रूप में त्रिशूल, चक्र और शंख है, शिव के ऊपरी हाथ की वस्तु अस्पष्ट है। व्याघ्राम्बर एवं पीतांबर तथा जटाएं और मुकुट अवलोकनीय हैं। [10]

धार्मिक समन्वयवादिता को प्रदर्शित करने के उद्देश्य से भारतीय शिल्पविधान और पूजा विधान में जिन संघात प्रतिमा स्वरूपों की कल्पना की गयी उनमें हरिहरपितामह अथवा दत्तात्रेय का भी उल्लेखनीय स्थान है। इसमें विष्णु, शिव एवं ब्रह्मा के ऐक्य को प्रदर्शित किया गया है। यह समन्वित प्रतिमा न केवल वैष्णव, शैव एवं प्रजापत्य संप्रदायों के विभिन्न पक्षों की अभिव्यक्ति ही करती है, अपितु इन तीनों धर्मो के अवलंबियों के पारस्परिक सद्भावपूर्ण संबन्धों का भी प्रतिनिधित्व करती है। समन्वयवादी दृष्टिकोण की व्यापकता के कारण विष्णु, शिव एवं ब्रह्मा की समन्वित प्रतिमा बनाने के संबंध में भारतीय शिल्पशास्त्रों में नियम एवं विधान प्राप्त होते हैं। पुराणों एवं आगम साहित्य में ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव की मूर्ति (त्रिमूर्ति) दो प्रकार से बनाने का विधान मिलता है। प्रथम वैष्णव त्रिमूर्ति (हरिहर- पितामह) तथा द्वितीय शैव त्रिमूर्ति (हरिहर-पितामह)। [11] विष्णुधर्मोत्तरपुराण में दत्तात्रेय की मूर्ति वाल्मीकि के सदृश्य बनाने का प्रसंग प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त अपराजितपृच्छा, रूपमण्डन एवं देवतामूर्तिप्रकरण में भी हरिहर पितामह की प्रतिमाशास्त्री विशेषताएं दृष्टिगत होती हैं। अपराजितापृच्छा में उल्लेख मिलता है कि हरिहर पितामह प्रतिमा एक ही देहवाली और

एक ही पीठ पर स्थित होना चाहिए। यह प्रतिमा चतुर्मुखी, षडभुजी एवं भुजाओं में अक्षमाला, त्रिशूल, गदा, कमंडलु, खट्वांग एवं चक्र धारण किए जाने का प्रसंग है। [12] अक्षमाला एवं कमंडलु ब्रह्मा के, चक्र, गदा विष्णु के तथा त्रिशूल एवं खट्वांग शिव के आयुध हैं। इन आयुधों के साथ इन देवताओं के वाहन भी प्रतिबिंबित किए जाने का उल्लेख प्राप्त होता है। हरिहरपितामह प्रतिमाओं का शिल्पांकन आठवीं शताब्दी ईस्वी से प्रारंभ हुआ। हरिहर पितामह स्वरूप को व्यक्त करने वाली अनेक प्रतिमाएं भारत की विभिन्न क्षेत्रों बिहार, खजुराहो, बादामी, कोटा, आबनेरी, ऐलोरा की गुफा संख्या 16 एवं 26 आदि स्थलों से चतुर्भुज ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव की स्वतंत्रत आकृतियां एक ही फलक पर अलग-अलग उकेरी गई है।

गुजरात (सौराष्ट्र) से त्रिमुखी एवं षड्भुजी, गरुड़ पर आसीन हरिहरपितामह प्रतिमा प्राप्त हुई है। प्रतिमा की भुजाओं में क्रमशः अक्षमाला, कमंडलु, चक्र, शंख, सर्प एवं त्रिशूल व सामान्य आभूषणों से सुसज्जित है। भोपाल संग्रहालय में प्रदर्शित 10वीं सदी ईसवी की मानखड (जबलपुर मध्य प्रदेश) से प्राप्त एक त्रिमूर्ति में ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव की स्वतंत्रत आकृतियों के माध्यम से हरिहर पितामह का अंकन प्राप्त होता है। 12वीं- 13वीं सदी ईसवी की एक अन्य त्रिमूर्ति जो वाराणसी से प्राप्त हुई है और वर्तमान में पटना संग्रहालय में संरक्षित है। 11वीं सदी ईसवी की दो मूर्तियां खजुराहो से प्राप्त हुई है जिनमें ब्रह्मा, विष्णुऔर शिव को पृथक- पृथक स्थानक मुद्रा में एक ही पंक्ति में आयुधों सहित प्रदर्शित किया गया है। इसी प्रकार तंजौर के बृहदेश्वर मंदिर (11वीं सदी ई0) के महामंडप की दक्षिणी भित्ती पर भी एक ही पीठिका पर स्थानक मुद्रा में हरिहर पितामह स्वरूप की मूर्ति उत्कीर्ण है।बादामी मैं विष्णु के तीनों गुणों (सृष्टि, स्थिति, संहार) को तीन प्रतीकों द्वारा प्रदर्शित किया गया है।

विष्णु, शिव, ब्रह्मा (त्रिदेव) एवं सूर्य की संयुक्त प्रतिमा को प्रतिमाशास्त्री ग्रन्थों में हरिहरपितामहहिरण्यगर्भ की संज्ञा प्रदान की गई है। इसका उल्लेख मार्कंडेयपुराण, अपराजितपृच्छा, रूपमण्डन, शारदातिलकतंत्र, देवतामूर्तिप्रकरण आदि ग्रंथों में किया गया है। इन ग्रंथो में विवेचित है कि हरिहरपितामहहिरण्यगर्भ प्रतिमा चतुर्मुख एवं अष्टभुजी होगी। प्रतिमा के चार मुख सूर्य, ब्रह्मा, विष्णु एवं शिव के द्योतक होंगे और खट्वांग, पदम चक्र, शक्ति, पाश, स्रुक, अक्षमाला एवं कपाल आयुध के रूप में हाथों में धारण किए हुए प्रदर्शित होना चाहिए। [13] सूर्य के दो हाथों में पद्मनाल, शिव के दो हाथों में त्रिशूल एवं खट्वांग, विष्णु के दो हाथों में शंख एवं चक्र तथा ब्रह्मा के दो हाथों में कमंडलु एवं अक्षमाला होंगे। [14] शिल्पशास्त्रों में वर्णित संयुक्त प्रतिमाओं का चित्रण कला में कुछ परिवर्तनों के साथ हुआ है। हरिहरपितामहहिरण्यगर्भ समान रूप से एक शरीर वाले त्रिमुख अथवा चतुर्मुख और अष्टभुज देवता के रूप में प्रदर्शित हैं। परंतु इस देवता के चित्रण का एक दूसरा प्रकार वह था जिसमें चारों देवता (ब्रह्मा, विष्णु, सूर्य और शिव) एक ही चतुष्क पर चार दिशाओं की ओर मुख करके स्थानक मुद्रा में प्रदर्शित हैं। शिल्पांकन के एक अन्य प्रकार में इस देव को एक ही शरीर वाले एक मुख और अष्टभुजाओं से संयुक्त प्रदर्शित किया गया है। इन मूर्तियों का निर्माण आठवीं-नौवीं शताब्दी ईस्वी से प्रारंभ हुआ जिनमें प्रमुख उदाहरण चिदंबरम, लिम्बोजी माता मंदिर (देवमल गुजरात), खजुराहो और भैरमगढ़ (बस्तर मध्य प्रदेश) नगर के समीप डोंगर रासपाडा, चांदपुर, ओसिया, सारनाथ झालरपाटन, किराडू, मोढेरा, बेलूर, गुजरात, महाराष्ट्र से प्राप्त हुई है। चिदंबरम प्रतिमा में सूर्य के तीन मुख एवं आठ भुजाएं प्रदर्शित हैं और उनके हाथों में कमंडलु, चक्र, त्रिशूल एवं गदा का अंकन है जो कि ब्रह्मा, विष्णु, महेश एवं सूर्य के आयुध हैं। सूर्य सात अश्वों से जुते हुए रथ में आरूढ़ हैं। [15] लिंबोजी माता मंदिर से प्राप्त एक त्रिमुखी प्रतिमा जिसमें शिव वाम पार्श्व, सूर्य - नारायण मध्य में तथा ब्रह्मा दक्षिण पार्श्व में वाहन (गरुड़, हंस एवं वृषभ) के साथ प्रदर्शित हैं। इस कोटि की त्रिमुखी और अष्टभुजी संयुक्त प्रतिमा खजुराहो के दूलादेव मंदिर, लक्ष्मण मंदिर, विश्वनाथ मंदिर, ज्वारी मंदिर, चित्रगुप्त मंदिर से भी प्राप्त हुई है। सूर्य के हाथों में सनाल-पद्म, विष्णु के शंख और चक्र, शिव के सर्प और त्रिशूल तथा ब्रह्मा के हाथों में वरदाक्ष और जलपात्र प्रदर्शित है। मोढेरा से प्राप्त अष्टभुजी मूर्ति में तीन मुख के स्थान पर केवल एक ही मुख प्रदर्शित किया गया है। मूर्ति की भुजाओं में वरद, चक्र, सनाल पद्म, त्रिशूल सर्प, पुस्तक और जलपात्र है। ओसिया से 11वीं सदी ईसवी की त्रिमुखी एवं अष्टभुजी तीन मूर्तियां प्राप्त हुई हैं। समभंग में खड़ी इन मूर्तियों में अधिकांश भुजाएं खंडित हैं। अवशिष्ट भुजाओं में त्रिशूल, चक्र एवं दो में पद्म का अंकन स्पष्ट है। इन प्रतिमाओं में अश्वमुख अश्विनी कुमारों तथा वृषभ, हंस एवं गरूड़ वाहन तथा दंड और पिंगल आदि का अंकन प्राप्त होता है। इस स्वरूप में केंद्र में सूर्य के होने के कारण ओसिया, खजुराहो तथा अन्यत्र के उदाहरणों से सूर्य के साथ उपानह, धर्म और अव्यंग प्रदर्शित किए गए हैं। मध्य मुख किरीटमुकुट (सूर्य-नाराण) तथा पार्वर्ती मुख जटामुकुट (ब्रह्मा-शिव) से सुशोभित है। बेलूर के चैत्र केशव मंदिर की 16 हाथों वाली मूर्ति में गरुड़ और नंदी वाहन स्पष्ट हैं और करो में वज्र, स्रुक, त्रिशूल, पद्म, बाण, धनुष, चक्र, डमरू, पताका, कलश, फल और दंड प्रदर्शित है। [16]

चंद्रयार्क पितामह स्वरूप की प्रतिमाओं में तीन देवताओं चंद्र, सूर्य और ब्रह्मा का संयुक्त मूर्तन कला में किया गया जिसका उल्लेख अपराजितपृच्छा एवं देवतामूर्तिप्रकरण में प्राप्त होता है। इन ग्रंथो में इन्हें चतुर्मुख, षड्भुज एवं समस्त आभूषणों सहित विवेचित किया गया है जिनके दो हाथों में कमंडलु एवं अक्षमाला दो में पद्म एवं दो ऊपरी हाथों में मृणाल का विवरण है। इसमें कमंडलु एवं अक्षमाला ब्रह्मा का, पद्म सूर्य का तथा मृणाल चंद्रमा का प्रतिनिधित्व करते हैं। चंद्रार्क-पितामह प्रतिमा राजस्थान (रणकपुर) के सूर्य मंदिर से प्राप्त हुई है। प्रतिमा त्रिमुखी तथा षड्भुजी है देवता को पद्मासन मुद्रा में प्रदर्शित किया गया है। ऊपर के दो हाथों में मृणाल, नीचले दोनों हाथों में से एक में पात्र और दूसरा भूमिस्पर्शमुद्रा में है। मध्यवर्ती दोनों हाथों में पद्म धारण किए हुए हैं जिनके द्वारा चंद्रमा, सूर्य एवं ब्रह्मा का प्रतिनिधित्व प्राप्त होता है।

सूर्यब्रह्मा स्वरूप की प्रतिमाएं नौवीं-दसवीं शताब्दी ईस्वी से प्राप्त होती हैं। इनका उल्लेख अपराजितपृच्छा एवं रूपमण्डन जैसे शिल्पग्रन्थों में प्राप्त होता है। इन ग्रंथो में इन्हें चतुर्मुख एवं षड्भुज विवेचित किया गया है। अपराजितापृच्छा में षड्भुज और चतुर्मुख सूर्य ब्रह्मा प्रतिमा के दो करो में कमंडलु और अक्षमाला तथा ऊपरी दो करो में पद्म का उल्लेख मिलता है। [17] दिनाजपुर बांग्लादेश से 11वीं सदी ईसवी की सूर्यब्रह्मा की एक षड्भुजी प्रतिमा प्राप्त हुई है जो राजशाही संग्रहालय में सुरक्षित है। देवता के दो हाथों में सनाल पद्म और शेष वरद-मुद्रा, अभय-मुद्रा, अक्षमाला और कमंडलु है। मोढेरा के सूर्य मंदिर में सूर्य ब्रह्मा की स्वतंत्रत मूर्ति का निर्माण किया गया है। यद्यपि मूर्ति की सभी भुजाएं खंडित हैं तथापि सप्ताश्वरथ (सूर्य) और हंस (ब्रह्मा) वाहन स्पष्ट हैं।

सूर्यनारायण संयुक्त मूर्ति में सूर्य के साथ विष्णु का घनिष्ठ संबंध प्रदर्शित किया गया है। इनके प्रतिमा विधान का उल्लेख अपराजितपृच्छा एवं रूपमण्डन में हुआ है। इनमें सूर्य और विष्णु के वाहन एवं आयुध को एक साथ अंकित किए जाने का उल्लेख है। इन देवों की संघात प्रतिमाएं कई क्षेत्रों से मिली है। इनमें अतरू, बड़ौदा, झालावाड़, नागदा, मोढेरा, आबनेरी, खजुराहो आदि से प्राप्त प्रतिमाएं मुख्य हैं। खजुराहो से सूर्य नारायण की स्थानक और आसन दोनों रूपों की मूर्तियां प्राप्त हुई हैं। यह मूर्तियां वामन, जगदंबा, कंदरिया महादेव और विश्वनाथ मंदिरों से प्राप्त हुई हैं। सभी मूर्तियां चतुर्भुज हैं जिनके ऊपरी दो करो में पद्म तथा नीचे के दोनों करो में चक्र और शंख है। आसन मूर्तियों में नीचे के दोनों हाथ योग मुद्रा में गोंद में प्रदर्शित किए गए हैं। अतरू, बड़ौदा और मोढेरा से प्राप्त

चतुर्भुज सूर्य नारायण मूर्तियों के साथ उपानह, धर्म तथा अश्विन देवता भी प्रदर्शित किए गए हैं। झालावाड़ से प्राप्त षड्भुज सूर्यनारायण के दो करो में पद्म तथा शेष चार में शंख, चक्र, गदा आदि प्रदर्शित है। बेलूर के चित्रकेशव मंदिर की चतुर्भुज मूर्ति समभंग में सप्ताश्वरथ पर खड़ी है और करो में पद्म, चक्र और शंख प्रदर्शित है। [18]

सूर्यशिव की संयुक्त मूर्ति में सूर्य, शिव से सम्बद्ध है। इनका उल्लेख शारदातिलक तंत्र नामक शिल्पग्रंथ में किया गया है। इस ग्रन्थ में सूर्य के ऐसे स्वरूप का उल्लेख हुआ है जिसमें आधा भाग शिव का बताया गया है। सूर्य अपने हाथों में पद्मनाल लिए हुए सुशोभित हैं एवं दूसरे भाग में शिव त्रिशूल धारण किए हुए विवेचित हैं। इसके साथ उनके वाहन नंदी एवं अश्व का भी प्रसंग है। किंतु शिल्प में यह स्वरूप अपेक्षाकृत कम दृष्टिगत होता है। उनकी मूर्तियां मध्य प्रदेश के पन्ना (मढिया) से प्राप्त हुई हैं। जिसमें षड्भुज सूर्यशिव के दो बायें हाथों में त्रिशूल और पदम है, तीसरा हाथ वरद- मुद्रा में है, दो दाहिने हाथों में पद्म और मृगांक है। देवता के पैरों में उपानह भी स्पष्ट है। इस मूर्ति में शिव वाहन नंदी के साथ में गरुड़ की भी आकृति बनी है जो सूर्य और शिव के साथ ही विष्णु के अंकन का भाव भी दर्शाता है। इसके अतिरिक्त राजशाही संग्रहालय, मोढेरा एवं हिंगलाजगढ़ (मंदसौर मध्य प्रदेश) से भी सूर्य-शिव की मनोरम मूर्तियां मिली है।[19]

उपर्यक्त मूर्तियों के अतिरिक्त ब्रह्मा-विष्णु, सूर्य-नारायण-ब्रह्मा, हरिहर रार्क, हरिहरसूर्यबुध्द, शिवलोकेश्वर आदि संघात प्रतिमाओं का उल्लेख शिल्पशास्त्र परंपरा में किया गया है, किंतु इनकी मूर्तियां कम प्राप्त हुई हैं। चतुर्भुज ब्रह्मा- विष्णु की दो मूर्तियां मोढेरा की सूर्य मंदिर से प्राप्त हुई हैं। एक श्मश्रुयुक्त, कुम्भोदर और किरीटमुकुटधारी देवता ललितासन मुद्रा में और दूसरी त्रिभंग में है। मूर्ति के करो में पद्म, चक्र और पुस्तक प्रदर्शित है। सूर्य नारायणब्रह्मा स्वरूप की एकमात्र ज्ञात मूर्ति मोढेरा के सूर्य मंदिर में है। अष्टभुजी मूर्ति के हाथों में वरद- मुद्रा, चक्र, सनाल पद्म, स्रुक, गधा, सनाल-पद्म और पुस्तक प्रदर्शित है। सनाल-पद्म सूर्य और चक्र तथा गदा विष्णु एवं स्रुक और पुस्तक ब्रह्मा के लक्षण हैं। हरिहरार्क स्वरूप में विष्णु, शिव और सूर्य की संघात मूर्तियां निर्मित हैं। इस स्वरूप की मूर्तियां षड्भुजी एवं एक मुखी त्रिमुखी है। मूर्ति में प्रदर्शित आयुधों एवं वाहनों के माध्यम से तीनों देवताओं के संयुक्त स्वरूप को व्यक्त किया गया है। मूर्ति के दो करो में शंख, चक्र दो में त्रिशूल और सर्प तथा शेष दो में पद्म हैं साथ ही गरुड़, नन्दी और सप्ताश्वरथ की आकृतियां प्रदर्शित की गई है जो क्रमशः विष्णु, शिव और सूर्य के लक्षण हैं। हरिहरार्क स्वरूप की मूर्तियां लगभग 11वीं 12वीं सदी ईसवी की है जो पन्ना (मध्य प्रदेश) के मल्हार, मढिया और आबनेरी, चित्तौड़ एवं आशापुरी (राजस्थान) से प्राप्त हुई है। बिहार से प्राप्त और वर्तमान में भारतीय संग्रहालय कोलकाता में सुरक्षित हरिहरसूर्यबुध्द स्वरूप की मूर्ति के मध्य में चतुर्भुज हरिहर और दोनों पार्श्वों में बुध्द और सूर्य की लघु मूर्ति स्थापित है। शिव के हाथों में त्रिशूल एवं कपाल और विष्णु के हाथों में चक्र और शंख प्रदर्शित है। सूर्य सप्ताश्वरथ पर आरूढ़ है जबकि बुद्ध द्विदल पद्म पर खड़े हैं। लगभग 12वीं सदी ईसवी की गरुड़ वाहन पर आरूढ़ और षड्भुजी लक्ष्मी नारायण की संघात मूर्ति कश्मीर के वेरीनाग (अनंतनाग) से प्राप्त हुई है। देवता के दाहिने हाथों में चक्र, गदा, पद्म और बाएं में दर्पण, कलश और पद्म प्रदर्शित है

बौद्ध धर्म एवं कला में भी शिव, विष्णु, गणेश, शक्ति, ब्रह्मा, सूर्य, इंद्र आदि ब्राह्मण देवों को बौद्ध देवी- देवताओं को अमानित करते हुए प्रदर्शित किया गया है। परवर्ती बौद्ध संप्रदाय में ध्यानी बुद्ध, अमिताभ, रत्नसंभव, अमोघसिद्धि, वैरोचन से उद्भूत अनेक देवी-देवताओं की कल्पना की गई है जिनके स्वरूप निर्धारण में समन्वयात्मक प्रवृत्ति दृष्टिगत होती है, वहीं दूसरी और अनेक ऐसी मूर्तियों का भी निर्माण किया गया है जिसमें धार्मिक कट्टरता एवं द्वेष की भावना व्याप्त थी। पूर्वी भारत में पाल शैली में ऐसी मूर्तियां निर्मित की गई जिनमें बौद्ध देवी-देवताओं द्वारा ब्राह्मण देवताओं को अपमानित करते हुए दिखाया गया है। इस प्रकार की मूर्तियों का एक विशिष्ट उदाहरण हरिहरिहरिवाहनोद्भवलोकेश्वर मूर्ति है। इस मूर्ति में पद्मपाणि अवलोकितेश्वर को हरि (विष्णु) के कंधों पर आरूढ़ दिखाया गया है जिसके नीचे क्रमशः हरि (विष्णु वाहन गरुड़) और हरि (शक्ति वाहन सिंह) की आकृतियां उकेरी गई है। बौद्ध मूर्ति स्वरूप में त्रैलोक्यविजय (पैरों के नीचे शिव और पार्वती), परमाश्व (पैरों के नीचे इंद्राणी, श्री, रति, प्रीति, इंद्र), वज्रहुंकार (पैरों के नीचे भैरव), अपराजिता, पर्णशबरी, विघ्नान्तक आदि बौद्ध देव शक्तियों द्वारा हिंदू मंगलकारी देव गणेश को दलित करते हुए, प्रसन्नतारा द्वारा इंद्र, रुद्र और ब्रह्मा को पददलित करते हुए एवं उभयवराहानन्दमारीची द्वारा विष्णु और शिव का मर्दन करते हुए मूर्तियों में प्रदर्शित किया गया है।

जैन धर्म में भी समन्वयवादी मूर्तियां बनी। द्वितीर्थी, त्रितीर्थी एवं चौमुखी मूर्तियों का निर्माण शिल्पियों ने किया जिनमें दो, तीन, चार अलग-अलग तीर्थंकरों को एक साथ उत्कीर्ण किया गया है। दूसरी ओर यक्ष और यक्षी के रूप में ब्राह्मण धर्म के विष्णु, शिव, ब्रह्मा, इंद्र, कार्तिकेय, काली, गौरी, सरस्वती, चामुंडा को भी अनेक तीर्थंकरों के साथ प्रदर्शित किया गया है। ऋषभनाथ और श्रेयांशनाथ के साथ यक्ष एवं यक्षी गोमुख- चक्रेश्वरी तथा ईश्वर-गौरी हैं जो शैव और वैष्णव धर्मों के प्रतिनिधि देव हैं। 22वें तीर्थंकर नेमिनाथ को बलराम एवं कृष्ण का चचेरा भाई स्वीकार किया गया है जिसके फलस्वरुप मथुरा, देवगढ़ (उत्तर प्रदेश) पधवली (मुरैना, मध्य प्रदेश) एवं अन्य स्थलों पर नेमिनाथ की मूर्तियों में बलराम और कृष्ण का भी रूपांकन शिल्पियों ने किया है। [20]

ईशा की प्रथम शती में स्मार्तों के पंचायतन-पूजन के स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं जिसके अंतर्गत शिव, शक्ति, गणेश विष्णु एवं सूर्य की उपासना प्रारंभ हुई जिनका रूपांकन मध्य युग में शिल्पियों के द्वारा अनेक मंदिरों में किया गया जिनमें प्रमुख हैं ओसिया (राजस्थान) का हरिहर मंदिर, खजुराहो (मध्य प्रदेश) का लक्ष्मण और विश्वनाथ मंदिर और भुवनेश्वर (उड़ीसा) का ब्रह्मेश्वर और चित्रेश्वर मंदिर आदि। [21] पौराणिक एवं स्मार्तों की पंचोपासना या पंचायतन पूजा एवं शिल्पियों के द्वारा रूपांकिता स्वरूप धर्मसहिष्णुता एवं सांप्रदायिक सद्भावना के प्रतीक थे।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि प्राचीन भारतीय कला के अंतर्गत संयुक्त या संघात प्रतिमाओं की अविच्छिन परंपरा रही है जो एक तरफ धार्मिक समन्वय या सामंजस्य का भाव अभिव्यक्त करती है, वहीं दूसरी तरफ विभिन्न संप्रदायों के अभ्युदय तथा उनकी पारस्परिक श्रेष्ठता के कारण उनमें कटुता एवं द्वेष का भाव भी परिलक्षित होता है। संघात मूर्तियां भारतीय शिल्पकारों की रचनात्मकता के साथ-साथ उनके गहन धार्मिक एवं दार्शनिक चिंतन को भी प्रदर्शित करती हैं। अतः प्राचीन भारतीय कला में संयुक्त या संघात मूर्तियों का अध्ययन केवल मूर्ति कला के इतिहास तक सीमित न होकर भारतीय समाज, धर्म, दर्शन और संस्कृति के समन्वित स्वरूप को समझने का महत्वपूर्ण माध्यम भी है।

संदर्भ सूची

1. डॉ तिवारी मारुतिनंदन एवं डॉ गिरी कमल, मध्यकालीन भारतीय प्रतिमा लक्षण, विश्वविद्यालय प्रकाशन चौक, वाराणसी, 1997, पृष्ठ- 185
2. डॉ राय भारतीय कुमारी, पंचदेव की मिश्रित मूर्तियां, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद 2004, पृष्ठ – 94
3. विष्णुधर्मोत्तरपुराण-खंड- 3, अध्याय- 260, श्लोक – 8-17
4. अपराजितापृच्छा -अध्याय-213, श्लोक-24
5. डॉ. तिवारी मारुतिनंदन एवं डॉ गिरी कमल, मध्यकालीन

भारतीय प्रतिमा लक्षण विश्वविद्यालय प्रकाशन चौक, वाराणसी, 1997, पृष्ठ, 190 – 191
6. डॉ. जोशी नील पुरुषोत्तम, प्राचीन भारतीय मूर्तिविज्ञान, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, 2014, पृष्ठ – 39
7. डॉ. मिश्र इंदुमती, प्रतिमा विज्ञान, मध्य प्रदेश हिंदी अकादमी, भोपाल, 1972, पृष्ठ- 277
8. विष्णुधर्मोत्तरपुराण-खण्ड-3, अध्याय- 108, श्लोक, 37- 38
9. डॉ. तिवारी मारुतिनंदन एवं डॉ. गिरी कमल, मध्यकालीन भारतीय प्रतिमा लक्षण, विश्वविद्यालय प्रकाशन चौक, वाराणसी, 1997, पृष्ठ -195
10. डॉ. जोशी नील पुरुषोत्तम, प्राचीन भारतीय मूर्ति विज्ञान, विहार राष्ट्रभाषा परिषद, 2014, पृष्ठ –43
11. डॉ राय भारतीय कुमारी, पंचदेव की मिश्रित मूर्तियां, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2004, पृष्ठ– 135
12. अपराजितापृच्छा, -अध्याय- 213, श्लोक 30-31
13. डॉ. राय भारतीय कुमारी, पू.नि. पृष्ठ – 124
14. अपराजितपृच्छा, अध्याय 213, श्लोक 32-34
15. बनर्जी जे0 एन0, द डेवलपमेंट ऑफ़ हिंदू आइकोनोग्राफी- मुंशीराम मनोहरलाल, नई दिल्ली, 1972, पृष्ठ – 551
16. डॉ. तिवारी मारुतिनंदन एवं डॉ. गिरी कमल, पू. नि. पृष्ठ- 203 – 204
17. अपराजितापृच्छा, -अध्याय 213, श्लोक 35-36
18. डॉ. तिवारी मारुतिनंदन एवं डॉ. गिरी कमाल, पू.नि. पृष्ठ – 205
19. तत्रैव
20. तत्रैव, पृष्ठ – 187 – 188
21. डॉ. मिश्र इंदुमती, प्रतिमा विज्ञान, मध्य प्रदेश हिंदी अकादमी, भोपाल 1972, पृष्ठ– 166 - 169